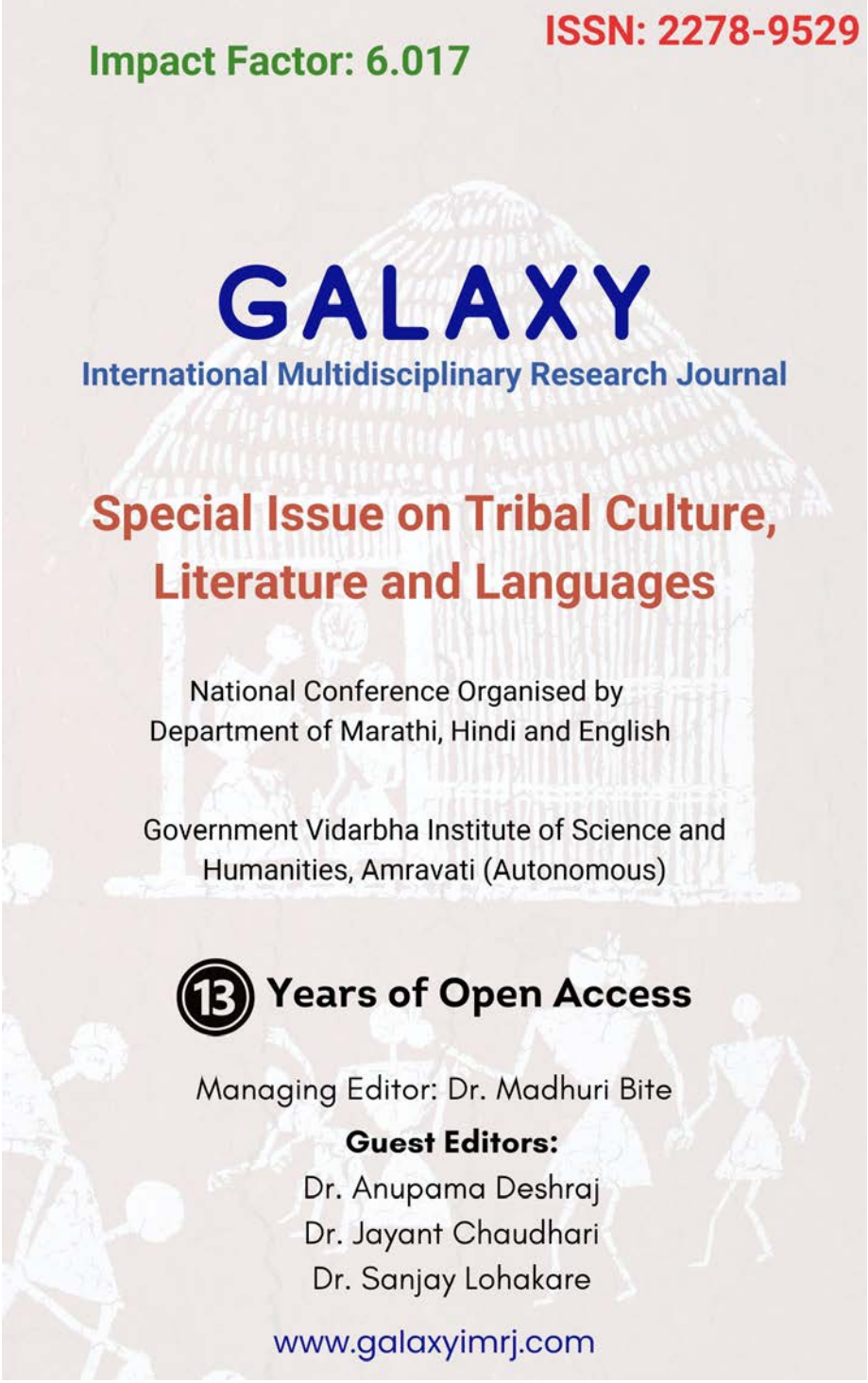

About Us: http://www.galaxyimrj.com/about-us/
Archive: http://www.galaxyimrj.com/archive/
Contact Us: http://www.galaxyimrj.com/contact-us/
Editorial Board: http://www.galaxyimrj.com/editorial-board/
Submission: http://www.galaxyimrj.com/submission/
FAQ: http://www.galaxyimrj.com/faq/

कोरकू लोकगीतों का वर्गीकरण एवं आशयात्मक विवेचन

प्रा. संगीता हिरालाल जावरकर
बाबा नाईक महाविद्यालय, कोकरुड
तह. शिराळा. जि. सांगली

सांराश : -

लोकगीत लोक समाज के विविध मनोदशाओं का वर्णन करता है। लोकगीतों का अध्ययन कर किसी भी समाज की मानसिकता को समझा जा सकता है। कोरकुओं के लोकगीत कोरकू जीवन के विविध प्रकार की मनोभावों का प्रदर्शन करते हैं। इनके जीवन की तमाम पहलुओं को समझने के लिए लोकगीत एक कारागार साधन हो सकता है, जिसके माध्यम से इनके रहन-सहन, खान-पान, रीती-रिवाज़, तीज-त्यौहार, देवी-देवताएँ, प्रथा-परम्पराएँ, संस्कृति, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक आदि पहलुओं को आसनी से समझ सकते है। इनके लोकगीतों का वर्ण्य-विषय मुख्य रुप से प्रकृति वर्णन, कृषि विषयक, ऋतु वर्णन, आखेट वर्णन, प्रणय प्रसंग वर्णन, रिश्ते-नाते संबंध तथा समाज जीवन आदि का भरमार देखने को मिलता है। डोलार गीत में भाई- बहन, माता-पिता, चाचा-चाची, मामा-मामी, सखी-सहेलि आदि नाते संबंध के पवित्र बंधन को निभाये जानेवाले मनोदशा को दर्शाता है, तो चाचरी गीत व्यंग्य के सहारे मानव संबंध पर तीखा प्रहार करता है। कोरकुओं के लोकगीत कोरकू जीवन के समग्र मनोदशा की विविध परतें खोलकर परोस देता है। अतः इनके लोकगीत जीवन दर्शन की अभिव्यक्ति करता है।

बीज शब्द : - कोरकू लोकगीत, 'पुरूष' प्रधान गीत, 'स्त्री' प्रधान गीत, 'स्त्री-पुरूष' प्रधान गीत, बालगीत, अन्य लोकगीत।

उद्देश – 1. कोरकू लोकगीतों का अध्ययन करना।
2. कोरकू मौखिक परंपरा का दस्तावेजीकरण करना।
3. कोरकू जीवनशैली को समझना।

संशोधन पद्धति – प्रस्तुत शोधालेख के लिए साहित्यिक शोध-प्रविधि का प्रयोग किया गया है। साथ ही आवश्यकतानुसार क्षेत्रीय शोध-प्रविधि का प्रयोग भी किया गया है। इस शोधालेख कार्य की पूर्णता हेतु संकलित लोकगीत, साक्षात्कार तथा कोरकू अभ्यासक, अनुसंधानकर्ताओं द्वारा लिखित ग्रंथ, आलेख आदि साधन-सामग्रियों का उपयोग किया गया है।

मूल आलेख : -

प्रस्तावना : -

कोरकू जनजाति आदिकाल से ही संगीतप्रिय रही है। कोरकू जनजाति में ढोल और पावी (बाँसुरी) का बड़ा ही महत्वपूर्ण स्थान है। यही नहीं उनके लिए संगीत जाननेवाला व्यक्ति राजा के समान प्रतिष्ठित एवं सम्मान का अधिकरी होता है। स्पष्ट है कि ढोल और पावी कोरकू जनजाति का प्रमुख वाद्य है। पर्व-त्यौहारों में केवल ढोल और बाँसुरी के स्वर और ताल में ही इनका जीवन थिरकता हुआ नजर आता है।

लोकगीत व्यक्ति विशेष का न होकर सामूहिक रचना कहलाती है। लोकगीत समाज की अभिव्यक्ति है। अतः इसमें समाज के समस्त पहलुओं का सुख-दुःख, राग-विराग, आशा-निराशा, ईर्ष्या-द्वेष आदि मनोभावों, रीति-रिवाज, आचार-विचार, रहन-सहन, विश्वास और परम्पराओं का सजीव चित्रण प्राप्त होता है। समाज में व्याप्त समस्त संबंधों का भावनात्मक निरुपण इसमें प्राप्त होता है। इस प्रकार कोरकू समाज का सर्वाधिक सच्चा और स्पष्ट रूप उसके लोक साहित्य में दृष्टिगोचर होता है। लोकगीतों का इतिहास उतना ही प्राचीन है जितनी मानव समाज के विकास की कहानी।

'लोक' शब्द की व्युत्पति :-

'लोक' शब्द संस्कृत के 'लोक दर्शने' धातु से 'घञ' प्रत्यय लगाने घर निष्पन्न हुआ है। इस धातु का अर्थ 'देखना' होता है जिसका 'लट-लंकार' में अन्य पुरुष एक वाचन का रूप 'लोकते' है। अतः 'लोक' शब्द का अर्थ हुआ 'देखनेवाला'। ऋग्वेद में प्रयुक्त 'देहि लोकम्' के अनुसार 'लोक' का स्थान भारत में एक प्रयोग मिलता है। महर्षि वेदव्यास ने महाभारत में 'लोक' शब्द का प्रयोग साधारण जनता के अर्थ में किया है। इस प्रकार 'लोक' शब्द का अर्थ जहाँ स्थान के लिए है, वहाँ जनसाधारण का भी द्योतक है। अशोक के शिलालेखों में 'लोक' का प्रयोग समस्त प्रजाजनों के हित में हुआ। बौद्ध धर्म के प्रचार के साथ 'लोक' मावन मात्र के भावों में भूषित हुआ।

'लोक' शब्द की परिभाषा :-

'लोक' शब्द का अर्थ बहुत व्यापक है, एक ओर तो यह शब्द अपने में विश्व अथवा समाज को समेट लेता है, तो दूसरी और यह जनसामान्य के अर्थ का भी द्योतक है। यजुर्वेद में 'लोक' (समाज) की एक विराट कल्पना की गई है। वह पुरुष रुप ईश्वर है। उसके सहस्त्रों मुख, सहस्त्रों नेत्र, और सहस्त्रों पद है -

सहस्त्र शीर्षा पुरुषः सहस्त्राक्षः सहस्त्रपात।'

डॉ. हरदेव बाहरी के अनुसार 'लोक' का अर्थ 'संसार', 'प्रजा' या 'लोक' होता है। मानक हिंदी शब्दकोश में 'लोक' का अर्थ को 'कोई ऐसा स्थान जिसका बोध देखने से होता है' ऐसा दिया गया है। श्री श्याम परमार के अनुसार – 'जिसे संस्कृति की संज्ञा दी जाती है, वह लोक से भिन्न नहीं है।' डॉ. उपाध्याय, 'लोक को मूल आदि स्थितियों में रहनेवाले जान से जोड़ते है।'

'फोक' एवं 'लोक' :-

फोक (Folk) शब्द की उत्पति Folc से हुई है। यह ऐंग्लोसेक्सन शब्द है जो जर्मनी में Volk रूप में प्रचलिन है। आंग्ल-भाषी प्रयोग की दृष्टि में फोक असंस्कृत और गुढ़ समाज अथवा जाति का द्योतक है पर सर्वसाधारण और राष्ट्र के सभी लोगों के लिए भी इसका प्रयोग होता है। अतः इसके संकुचित और विस्तृत दोनों ही अर्थ उपलब्ध है।

ऑक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी के अनुसार 'Folk' का अर्थ 'people in general' अर्थात् सामान्य जन होता है। बृहत् हिंदी कोश के अनुसार 'लोक' का अर्थ संसार, पृथ्वी, मानव जाति आदि है। श्री लक्ष्मीधर वाजपेयी के अनुसार 'लोक' का तात्पर्य सर्वसाधारण जनता है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि – 'आदिम प्रथा-परंपराएँ, संस्कृति, सभ्यता, रीती-रीवाज़, बोली-भाषा, चली-रीती, गीत, कथा, संगीत, वार्ता, विश्वास, आदर्श, सदियों से चली आ रही भाव-भावनाएँ आदि से युक्त पूर्व-संचित अलिखित मौखिक परंपराएँ और धारणाओं का निर्वाहण-संवाहन करने वाले तथा सुरक्षित-संरक्षित रखने वाले सामान्य जनों के समुह को 'लोक' कहा जा सकता है।' साधारण अर्थ में 'लोक' शब्द समस्त मानव समाज के लिए प्रयुक्त होता है। ध्यान से देखा जाए तो लोक-निंदा, लोक-लज्जा, लोक-सम्मान आदि शब्दों का प्रयोग करते समय हमारे मन में समस्त मानव समाज के द्वारा होने वाली निंदा, लज्जा और सम्मान का चित्र रहता है। यह लोक शब्द का व्यापक अर्थ में प्रयोग है।

'गीत' शब्द की व्युत्पति :-

गीत 'शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत धातु गै से हुई है।

'गै' (गाना) + 'क्त' = 'गीत', जिसका अर्थ है गाने के रूप में आया या लाया हुआ।

सरस्वती शब्द कोश में 'गीत' शब्द की व्युत्पक्ति 'गै' धातु से मानी गई है। जिसका अर्थ है - गाइलेले।

हिंदी शब्दकोश में 'गीत' शब्द का अर्थ गाया हुआ अथवा पद्यात्मक रचना दिया गया है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि 'गीत' शब्द की व्युत्पत्ति 'गै' धातु से हुई, जिसका अर्थ 'गाया हुआ' होता है।

'गीत' शब्द की परिभाषा -

जब भी मानव सुख या दुःख की अनुभूति का अहसास करता है, तब वह गुनगुना उठता है, उसकी इसी स्वयंस्फूर्त वाणी को गीत कहा जा सकता है। धरती पर शायद ही कोई ऐसा इंसान होगा जिसे कम से कम इस बात का थोडा बहुत अदाज़ा न हो कि गाना क्या होता है। गाने हजारों साले से मानवता को घेरे हुए है और भावनाओं, इच्छाओं, उम्मीदों को मधुर तरीके से व्यक्त करने का एक तरीका रहा हैं।

'गीत' शब्द की परिभाषा देते हुए रामचंद्र वर्मा कहते है – 'गीत वह पद्यात्मक रचना है जो केवल गाए जाने के लिए बनी हो। इसमें प्रायः एक ही भाव की अभिव्यंजना होती है। इसमें लय तथा स्वर की प्रधानता अन्य पद्यात्मक रचनाओं से अधिक होती है।'

डॉ. हरदेव बाहरी गीत को छोटी पद्यामक रचना मानते है। हिंदी विश्वकोश में गीत की परिभाषा देते लिखा गया है कि - 'स्वर, पद और ताल युक्त जो गान होता है उसे 'गीत' कहते हैं।

'लोकगीत' की परिभाषा –

गीत मनोभावों की अभिव्यक्ति का वह माध्यम है, जिसमें संगीत का अस्तित्त्व धुन के रूप में निहित होता है। 'लोक' से सम्बंधित होते ही उसकी व्यक्तिपरक महत्ता सामूहिक तत्त्वों के अनुरुप ढल जाती है। व्यक्तित्व का जो आभास कला गीतों में मिलना सहज और अनिवार्य है वैसे लोकगीतों में नहीं, क्योंकि लोकगीत व्यक्ति-गीत नहीं है; उनमें समूहगत भाव अभिव्यक्त होता है।

'लोक गीत' इस शब्द में दो शब्द पाये जाते है 'लोक' एवं 'गीत' अर्थात लोक के गीत। जिन गीतों में लोक की संवेदना प्रस्फुटित होती है उन्हें 'लोक-गीत' कहते है। 'लोकगीत' शब्द के पाश्चात्य शब्द 'फोकसाँग' (Folksong) का पर्यायवाची है जो जर्मन शब्द Volk का रुपान्तर है।

डॉ. नारायण चौधरी ने लिखा है - लोक में प्रचलित, लोक द्वारा रचित एवं लोक के लिए लिखे गये गीतों को लोकगीत कहा जा सकताहै। डॉ. सदाशिव फड़के का कथन है- 'शास्त्रीय नियमों की विशेष परवाह न करके सामान्य लोक-व्यवहार के उपयोग में लाने के लिए मानव अपने आनंद-तरंग में जो छन्दोबद्ध वाणी सहज उद्‌भूत करता है, वही लोकगीत है।'

लोकगीत की परिभाषा देते हुए 'Encyclopedia Britannica' लिखा है – "The Primitive spontaneous music has been called folk songs." (आदिमानव का उल्लासमय संगीत ही लोक-गीत कहलता है)

लोक-साहित्य विशारदों की परिभाषाओं के आधार पर निष्कर्षतः कहा जा सकता है – 'लोक प्रकृति समीप रहता हो, प्रकृति के पूजक हो, सामान्य जीवन-यापन करता हो, जो सामान्य जनों में पले-बढ़े हो, जो आदिम जीवन के समीप रहता हो, जो लोग आदिम लोकसंस्कृति की जन चेतना की संवाहिका हो, जिन लोगों की मौखिक-वाचिक परंपरा हो, जिन के जीवन में आज भी आदिम जीवन-दर्शन विद्यमान हो, जिन लोगों की स्वयं की बोली भाषा, संस्कृति, सभ्यता, रिती-रिवाज़, प्रथा-परंपराएं, तथा जिनके ग्राम्य जीवन-दर्शन हो, जिसके वर्ण्य-विषय व्यापक हो, जो मौखिक परंपरा के सहारे सदियों से चले आ रहे हो, जिनमें लोक के दिलों की निश्चल अभिव्यक्ति हो, जो बोली भाषा में अनामिक कर्ता द्वारा रचे गए हो, ऐसे जन सामान्य जीवन अनुभव के निःस्वार्थ उन्मुक्त गायक द्वारा रचे गए गीत को 'लोकगीत' कहा जा सकता है।'

कोरकू लोकगीतों का वर्गीकरण एवं आशयात्मक विवेचन –

लोकगीत मानव मन का एक सहज आविष्कार है। लोकगीत लोकसंस्कृति की अभिव्यक्ति है। दुनिया में हर मानव समूह की अपनी संस्कृति है। हम देखते है कि इसका प्रसारण मुख्य रुप से लोककथा, लोकगाथा, लोकनाट्य और लोकगीतों की मौखिक परंपराओं पर आधारित है। कोरकू के लोक गीतों में सरस जीवन प्रतिबिम्बित होता है। मानव मन की विभिन्न परतें खोलकर उनमें रख दी गई है। कोरकू लोक गीतों में दर्शन के साथ जीवन का स्पन्दन है। साथ ही बहुरंगी छटा प्रकृति की मोहक गुंज, मेहनतकष मजदूरों की कर्णप्रिय राग की झंकार, पुलक प्रसन्नता, सहज किलकारी, स्वाभाविक रुदन, यत्र-तत्र सदैव सुनाई देती है। कोरकू बोली में गीत को 'सिरींज'कहा जाता है।

कोरकू लोकगीतों के एक अध्ययन से पता चलता है कि इसमें अन्य आदिवासी लोकगीतों की विशेषताएँ भी पाई जाती हैं। कोरकू लोक गीत जन्म, विवाह, मृत्यु के साथ-साथ विभिन्न त्योहारों के अवसर पर गाए जाते हैं। वह कब गाया जाता है? कहाँ गाया जाता है? क्यों गाया जाता है? गानेवाले कौन हैं? इस आधार पर इसे निम्नानुसार वर्गीकृत किया जा सकता है –

कोरकू लोकगीत

(1)'पुरूष' प्रधान गीत	**(2)'स्त्री' प्रधान गीत**	**(3)'स्त्री-पुरूष' प्रधान गीत**	**(4) बालगीत**	**(5) अन्य लोकगीत**
1.गोगोलया सिरींज	1.चिरोड़ी सिंरींज	1. झामटा सिरींज	1.डोबका-डोबडे	1.तंत्र-मंत्र संबंधी गीत
2.चाचरा सिरींज	2.डोलार सिरींज	2.देवकुदी सिरींज	2.बुकरबुना-बाबजीबुना	2.निमाड़ी गीत
3.ढ़ाडेल सिरींज	3.ब्याह सिरींज	3.फुलजागनी	3.डेडरा माता(बालकों के)	
4.खंबा सिरींज	4.खेंडेरा सिरींज	4.किर्तन भजन		
5.सजनाई सिरींज	5.जेरी सिरींज			
6.होन्यार सिरींज	6.रारी सिरींज			
7.डंडा सिरींज	7.डा सिरींज			
8.सृष्टि गीत	8.लोरी सिरींज			
9.होली बोबोलो गीत	9.निंदाई सिरींज			
	10.चक्की सिरींज			
	11.दसवाँ सिरींज			
	12.पूजा सिरींज			

13.फगवा सिरींज
14.डेडरा सिरींज
15.उम्बुल पूजा सिरींज
16.फगनाय सिरींज

पुरुष प्रधान लोकगीत –

पुरुष प्रधान लोकगीत यह पर्व-त्यौहार, धार्मिक अनुष्ठान, विविध सांस्कृतिक कार्यक्रमों के आयोजन तथा मनोरंजनार्थ गीतों का महफिल सजाये जाते हैं तब यह केवल कोरकू पुरुषों द्वारा गाये जाते है, जिसकी हम निम्नवत् चर्चा करेगें –

ढांडेल सिरींज -

यह गीत भवई के दिन दोपहर को ३ बजे के लगभग गाँव के बुजुर्गों द्वारा मुठवा बाबा के पास गाया जाता है। यह गीत दो प्रकारों में विभाजित है - एक 'खड़ा ढाडेल'और दूसरा 'आड़ा ढांडेल'। 'खड़ा ढाडेल'को गोलाकर खड़े होकर गोल-गोल नृत्य करके विविध मुद्राओं के साथ डंडे को मारते हुए उसकी की खट-खट की आवाज को गीत के ताल के साथ मिलाकर गाया जाता है। इस प्रकार यह गीत खड़े होकर गाया जाता है, इसलिए इस गीत को 'खड़ा ढांडेल'कहा जाता है। 'आड़ा ढांडेल'यह चाचरी गीत जैसा किया जाता है। जिस प्रकार चाचरी गीत वाले कलाकार एक-दूसरे के सन्मुख आड़े में खड़े होकर गीत गाते है। इसमें भी वैसे ही आड़े में खड़े होकर डंडे को जोर-जोर से बजाते हुए कमर को झुकाकर गीत गाये जाते है इसलिए इसे 'आड़ा ढांडेल'कहा जाता है। 'डंडे' का प्रयोग दोनों प्रकार के ढांडेल में समान रुप से किया जाता है। डंडे की खट-खट से सुमधुर आवाज उत्पन्न कर गीत गाने की कोरकुओं की यह आदिम परम्परा है, जो प्रकृतिवादी होने का सशक्त प्रमाण भी प्रस्तुत करता है। वैसे तो कोरकुओं के प्रत्येक गीत में प्रकृतिवादी होने का साबुत सहज ही मिल जाता है। आप कोई भी गीत उठा लीजिए हर गीत में कहीं न कहीं प्राकृतिक चित्रण सहज एवं अनायस ही आ जाता है। ढांडेल भी वैसा ही एक गीत प्रकार है। इस गीत प्रकार की एक मुख्य विशेषता यह है कि इस गीत को वर्ष भर में, ३६५ दिनों में से केवल एक ही दिन गाये जाने का रिवाज़ कोरकू में है। ढांडेल गीत निम्नांकित द्रष्टव्य है –

आकाशों चौहरा धरती भौरा,
गर्जा तीन्जकेन जा भौरा सेनेमा रे
माय ना बापू जन्म दियो
मुलको देखना जा भौरा सेनेमा रे

डंडा गीत -

जब धरती का कण-कण गाने लगता है, आसमान के बादल बरसात के रुप में धरती से मिलने को आतुर हो उठता है, नदी समुद्र को मिलने के लिए श्रृगांर कर दौड़ उठती है तथा निसर्ग अपने-अपने श्रृंगार में लग जाते है । तभी कोरकू युवकों की टोली समय के साथ प्रकृति के रंग में रंगकर डंडा नृत्य करने लग जाते है। इस नृत्य का अपना अलग और मौलिक स्थान है । यह नृत्य मूलतः पुरूषों का संध्या या रात के समय किया जानेवाला नृत्य है । जिसका स्वरूप सामुहिक होता है। यह नृत्य गीत के साथ गोलाकार रूप में घेर बनाकर किया जाता है। हाथ में डंडा लेकर इसमें रूचि लेनेवाले पुरूष एक दूसरे के डंडे को मारकर ताल का निमार्ण करते है और गीत गाते हुए गोलाकार रूप में नृत्य करते है। यह भवई से पोला अर्थात जुन से सितंबर माह के बीच प्रस्तुत किया जानेवाला लोकनृत्य है। गीत एक के बाद एक बदलते जाते है और नर्तक उन गीतों की ताल पर निरंतर नाचते रहते है। इन गीतों में गीत गायन से पूर्व प्रारंभिक ध्वनि गायी जाती है जिसे 'लेंगी' कहा जाता है। जैसे -

सूखा बदरियाँ अरे पीऊँ गर्जेना रे
गर्जे तड़केदार रे गर्जे तड़केदार
रेबा रे रबुदा जलथल भरे रे
रे सकल उतरे पार।
आकाश तड़के अरे मेंव बरसे ना रे
बरसे आखड़दार बरसे आखड़दार
गंगा-जमुना जलथल भरे रे
रे सकल उतरे पार।।

इसके बाद गीत गाया जाता है । यह गीत प्रश्नोत्तर के रूप में होता है । पहले दो पंक्तियों में एक प्रश्न होता है तो दूसरी दो पंक्तियों में उसका उत्तर होता है। यह रसिकता से भरा हुआ प्रसंग सारे दर्शकों को रस में डुबाता हुआ काफी देर तक चलता है।

लगभग चार माह तक इसकी बहार समग्र कोरकू प्रदेश के लोगों को आकर्षित करती रहती है । पोले के दूसरे दिन विशेष भोज का आयोजन कर डंडा गीत गाते और नृत्य करते हुए गांव के पास के नदी में इन डंडो को विसर्जित किया जाता है। वर्षा के अभाव के दिनों अधिक उल्लास और उत्साह के साथ इसको खेला जाता है। गीत द्रष्टव्य है –

चिरमिरी डोला लगाए मारी साली
चिरमिरी डोला लगाए
काहे का आफा में डाले पानी
चिरमिरी डोला लगाए
नींबू का आफा मा डाले
चिरमिरी डोला लगाए
काहे का आफा में डाले पानी
चिरमिरी डोला लगाए
तुलसी का आफा मा डाले
चिरमिरी डोला लगाए

स्त्री प्रधान लोकगीत -

चिरोडी गीत -

यह गीत पोला से दशहरा के बीच गाया जाता है। जो स्त्री प्रधान गीत है। चिरोड़ी का अर्थ है एक दूसरे को चिढ़ाना । जिसमें सबसे ज्यादा व्यंगात्मक गीत होते है, साथ ही नये रिश्तों को जोड़नेवाले गीत, वधू को देखने से संबंधित गीत, शिकार, खेल एवं मनोरंजनात्मक आदि भी इन गीतों के विषय होते है। कोरकू लोकगीतकारों द्वारा शिकार करने के दृश्य को गीतों के माध्यम से अभिव्यक्त करते है। गीत निम्नांकित है –

बारा बरूला डाई शिकारी जा
बारा बरूला डाई शिकारी।
कुरुम्बो आदारेन डाई गुगूल वा जा
कुरुम्बो आदारेन डाई गुगूल वा।
जोड़ा भूंदकी डाई खांदावेन जा
जोड़ा भूंदकी डाई खांदावेन।
जोड़ा हेरण्या डाई मारीले जा
जोड़ा हेरण्या डाई मारीले।

डोलार गीत -

डोलार गीत जीरोती से पोला अर्थात अगस्त से सितंबर के बीच गाया जाता है। आधुनिक सभ्य समाज में जैसे रक्षाबंधन का त्यौहार होता है उसी के अनुरूप यह एक भाई बहन का त्यौहार है। डोलार गीतों में अपने भाई को बहन के द्वारा डोलार बांधने के लिए रट लगाना, भाई बहन के बीच के प्रेम गीत, माता पिता के प्रति प्रेम के गीत आदि से संबंधित गीतों को डोलार के रूप में बंधा हुआ झुले पर बैठकर गाने की परंपरागत प्रचलित प्रथा है । इसमें अरसुल (खिला), पटली, चरटों ,आडा, देगडया फूल,चिलाटी वेली,जामुन के पत्ते, येला आदि साहित्यों का प्रयोग किया जाता है । डोलार गीतों का एक क्रम होता है जिनमें डोलार के लिए स्तवन गीत, भाई के डोलार बांधने के लिए आग्रह के गीत, माता पिता से डोलार झुलने के लिए अनुमति माँगनेवाला गीत और प्रकृति के विभिन्न पहलुओं को उद्घाटित करनेवाले गीतों का समावेश होता है । यह गीत व्यंगात्मक, शिक्षाप्रद, मनोरंजक, रिश्ते नातों से संबंधित एवं कृषि विषयक होते है । इन गीतों में प्रकृति के संसोधनों का मानवीकरण के रूप में प्रस्तुति होती है।

उदा. राई चंपा फूल जा केरला राई चंपा फूल

डेडरा माता गीत -

ग्रीष्मऋतु के समापन और वर्षाऋतु के आगमन के पुर्व भवई उत्सव कोरकू प्रदेश बडे उल्हास के साथ मनाया जाता है। जिसमें कोरकू समुदाय वर्षा के देवी-देवताओं को आह्वान करते है कि ‘इस वर्ष भरपूर मात्रा में वर्षा हो और सम्पुर्ण सृष्टि में हरियाली एवं खुशहाली हो। वर्षा अच्छी होती है तो खेती में पैदावार अच्छी होंगी, पैदावार अच्छी होती है तो सम्पुर्ण मानव जाति में सुख, समृद्धि

और सपन्नता आयेगी और इस बरस ऐसा ही हो। ऐसी कामना कोरकू समुदाय अपने इष्ट देवी-देवताओं से भवई के इस पावन पर्व में करते है। वर्षा से संबंधित गीत निम्नांकित है -

डेरा डेरा डेरा बाबा पानी ना दे
डेरा डेरा डेरा बाबा पानी ना दे।
बाबा पाला सुखी गयो पानी ना दे
डेरा डेरा डेरा बाबा पानी ना दे।
ज्वारी पाला सुखी गयो पानी ना दे
डेरा डेरा डेरा बाबा पानी ना दे।
सँवा पाला सुखी गयो पानी ना दे
डेरा डेरा डेरा बाबा पानी ना दे।

स्त्री-पुरुष प्रधान लोकगीत -

फगनाय गीत -

फगनाय गीत की शुरुवात दशहरा से होती है। यह कोरकू जनजाति में सबसे अधिक समय तक गाया जानेवाला गीत है। फगनाय फाग माह में सबसे ज्यादा गाया जाता है, और फाग मांगते समय इस गीत को गाया जाता है इसलिए इसे फगनाय गीत कहा जाता है। यह फगनाय गीत वाद्यों के साथ गाया जाता है। इसमें टिमकी, ढोल, झाँझ आदि वाद्यों का समावेश होता है। यह गीत घर के आँगन में गोलाकर बैठकर गाया जाता है। दशहरा से होली आने तक यह गीत प्रायः ज्यादातर रात्री को ही गाया जाता है, किन्तु होली में फाग मांगने की प्रथा है। फगवा मांगने के कारण यह गीत होली के पाँच दिन, रात्री एवं दिन में गाने की परम्परा है। इसका प्रारंभ दशहरा से होता है और समापन होली में होता है। दशहरा से लेकर तो होली तक अर्थात कुँवर माह से लेकर तो फागून माह आने तक होली से संबंघित एवं रंग खेलने विषयक गीत नहीं गाये जाते। फागून माह आने तक सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, व्यापार, कामधंदे, एवं अन्य गीतादि गाने की प्रथा है जिसमें अधिकतर समय धार्मिक गीत गाये जाते है। जैसे ही फागून माह प्रारंभ हो जाता है वैसे ही होली एवं रंगों से संबंधित गीत गाना शुरु हो जाता है, तो होली पर्व समाप्त होने तक यह गीत गाने की परम्परा है। फगनाय गीत यह पुरुष तथा महिलाओं द्वारा गाया जाता है। महिलाओं के फगनई गीत में पुरुषों के वाद्यों जैसा कोई वाद्य नहीं होता। महिलाएँ यह गीत वाद्यहिन ही गाते है किन्तु पुरुष एक स्थल पर बैठकर वाद्य का प्रयोग कर गीत गाते है। महिलाओं का फगनई गीत इसके विपरित है। उनके गीतों में गतिशीलता होती है। यह एक कतार में खड़े होकर बायी ओर से दायी ओर कदमों से कदम मिलाते हुए गाते है। होली के पर्व पर पाँचों दिन फगनाय गीत गाकर फगवा मांगने की प्रथा है। स्त्रियाँ न केवल अपने गाँव में ही फाग मांगते है, बल्कि आस-पास के गाँव में भी फगवा मांगने जाती है। फगनाय गीत निम्नांकित है-

अंधारी रातें मुझे चांदनी राते
चाँदनी राते सुवाहनों रे।
माहुवा जो पाला हरो-नीलो देखें
चाँदनी रातें सुवाहनों रे।
अंधारी रातें मुझे चांदनी राते
चाँदनी राते सुवाहनों रे।
आँबुवा जो पाला हरो-नीलो देखें
चाँदनी रातें सुवाहनों रे।

झामटा गीत –

होलिका दहन के दिन से पाँच दिन तक यह गीत पुरुषों एवं स्त्रियों द्वारा गाया जाता है। इन दिनों में सर्वत्र उत्साह व आनंद का वातावरण रहता है और गीत के माध्यम से अपने आराध्य देवों की आराधना की जाती है साथ ही झामटा खेल में सम्मिलित होने का निमंत्रण दिया जाता है। इन पाँचों दिनों में किसी भी प्रकार का श्रम का कार्य नहीं किया जाता। बल्कि इन दिनों में कोरकू आनंद-उत्साह से त्यौहार मनाने में लीन रहते हैं। झामटा गीत फगवा मांगते वक्त गाया जाता है। फगवा माँगने के लिए कोरकू भाई गाँव में और अन्य गाँवों में भी जाते है। पुरुषों की तथा स्त्रियों की पृथक-पृथक टोली अपने परम्परागत वस्त्रों से सुसज्जित होकर प्रत्येक घर में फगवा मांगने जाते है। यह टोली आँगन में खड़े होकर या बैठकर गीत गाते है। स्त्रियाँ बिना किसी वाद्य के झामटा गीत गाती है। इसके विपरित पुरुष ढोल, टिमकी, बाँसुरी, झाँझ, आदि के साथ गीत गाते है। लोकगीत निम्नांकित है -

झामटा खेलेना आयोजा दाई पटेल

झामटा खेलेना आयो

आमी तो बारह महिना फिरी मांगीयो जा दाई पटेल

झामटा खेलेना आयो

'डंडा गीत' भवई और पोला के बीच गाया जाता है। यह पुरुषप्रधान गीत प्रकार है। उसी प्रकार 'चिरुडी' यह स्त्रीप्रधान गीत है, जिसमें नृत्य भी होता है। 'डोलार गीत' केवल महिलाएँ गाती हैं। इसके अलावा सुसुन-गादुली स्त्री-पुरुष दोनों मिलकर ढोल, पावी, थापती तथा छोटे-छोटे उद्घोषणाओं के साथ प्रस्तुत करते हैं और लोगों का लोकरंजन करते हैं। 'फगनाय गीत' यह दशहरा से होली तक का और 'चाचरी - गोगोलिया गीत' होली से भवई के बीच का पर्व है। निंदाई सिरिंज - खेत में निंदाई करते समय गाया जाने वाला गीत है तो चक्की सीरिंज - चक्की पर पीसते समय गाये जाने वाला गीत है। फूल-जागनी गीतमुंडा बैठाते (श्राद्ध के) समय गाये जाने वाला गीत है। पूजा सिरिंज - खेड़ा, मुठवा, माता आदि जैसे ग्राम देवी-देवताओं की पूजा के दौरान गाए जाने वाले गीत है। 'खम्ब नाट्य' भी बहुत प्रसिद्ध है, जिसका कोई विशेष समय या ऋतु नहीं होता। लोग अपनी सुविधा के अनुसार इसका आयोजन करते हैं। होली कोरकू जनजाति का सबसे बड़ा त्यौहार हैं, जोकि पाँच दिनों तक मनाया जाता है। इन पाँच दिनों में अनेक प्रकार की नृत्य कलाएँ प्रस्तुत की जाती है, जिसमें - फगनाय, झमटा, होरियार, सजनाई, फगवा, खेंडेरा, रारी, जेरी, होली बोबोलो आदि गीत गाकर तथा डोबका-डोबडे, सुसुन गादुली आदि नृत्य के साथ फगवा मांगने की प्रथा कोरकू में प्रचलित है।

उपसंहार -

भारतीय आदिवासी कोरकू जनजाति का 'पर्व' उनकी सभ्यता और संस्कृति का दर्पण है, जिसमें उनकी धार्मिक विधि, लोकगीत, लोकनृत्य, लोककथा, बोली भाषा एवं जीवनशैली का प्रत्यक्ष प्रतिबिंब देखने को मिलता है। इनके तीज-त्योहारों में ऋतुओं जैसी विविधता है। तीज-त्योहारों के अवसर पर गायें जानेवाले लोकगीत उनके जीवन और संस्कृति को उभारते है। लोककथा उनके जीवन दर्शन को दर्शाते है। लोकनृत्यों में उनके कलाविष्कारों की प्रचिति होती है। इनके जीवन दर्शन को वही समझ सकता है जो इन जनजाति के भाव-भंगिमा में समरस हो। किसी विद्वान ने सच ही कहा है कि भारतीय संस्कृति आदिवासी संस्कृति की ही उपज है। आदिवासी संस्कृति, सभ्यता भारतीय समाज और सभ्यता का आज भी 'रीड की हड्डी' है।

संदर्भ सूची -

1. डॉ. अशोक द. पाटील कोरकू जनजीवन विश्वभारती प्रकाशन, नागपुर - 440012 प्रथम संस्करण 1993
2. डॉ. नारायण चौरे भारतीय जनजाति कोरकूओं के लोकगीत विश्वभारती प्रकाशन, नागपुर - 440012 प्रथम संस्करण 1989
3. डॉ. नारायण चौरे कोरकू जनजाति का सांस्कृतिक इतिहास विश्वभारती प्रकाशन, नागपुर - 440012 प्रथम संस्करण 1987
4. डॉ. अजीतसिंह दलरंजनसिंह पौहार, कोरकू लोकगीतों का साहित्यिक अध्ययन विश्वभारती प्रकाशन, नागपुर - 440012
5. डॉ. धर्मेन्द्र पारे, 'कोरो आना' कोरकू जनजाति की कथाएँ, आदिवासी लोक कला एवं बोली विकास अकादमी मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद, जनजातीय संग्रहालय, श्यामला हिल्स, भोपाल, मध्यप्रदेश - 462002, 2013
6. डॉ. धर्मेन्द्र पारे, कोरकू संस्कार गीत, आदिवासी लोक कला अकादमी मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद, मुल्ला रमूज़ी संस्कृति भवन आधार तल बाणगंगा भोपाल, मध्यप्रदेश - 462003, 2004
7. राधेश्याम बि. शाडिल्य, सं. कपिल तिवारी, कोरकू गीत, आदिवासी लोक कला एवं तुलसी साहित्य अकादमी मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद, मुल्ला रमूज़ी संस्कृति भवन आधार तल बाणगंगा भोपाल, मध्यप्रदेश - 462003, 2008
8. डॉ. धर्मेन्द्र पारे सं. कपिल तिवारी , कोरकू देवलोक, आदिवासी लोककला अकादमी मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद, मुल्ला रमूज़ी संस्कृति भवन आधार तल बाणगंगा भोपाल, मध्यप्रदेश - 462003, 2006
9. डॉ. धर्मेन्द्र पारे, सं. कपिल तिवारी, कोरकू जनजातीय गाथा - ढोला कुँवर, आदिवासी लोक कला अकादमी मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद, मुल्ला रमूज़ी संस्कृति भवन आधार तल बाणगंगा भोपाल, मध्यप्रदेश - 462003, 2005
10. सं. कपिल तिवारी, सम्पदा मध्यप्रदेश की जनजातीय सांस्कृतिक परम्परा का साक्ष्य आदिवासीलोक कला अकादमी मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद, मुल्ला रमूज़ी संस्कृति भवन आधार तल बाणगंगा भोपाल, मध्यप्रदेश - 462003, द्वितीय संस्करण, 2006
11. जोशी हरीप्रसाद, कोरकू जनजाति, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी,भोपाल, 1989
12. शांडिल्य, पी. बी. कोरकू भाषा का परिचय वन्य जाती खंड 3, 8, 12, 1955
13. डॉ. गिरीश सिंह पटेल, हिंदी लोकगीतों का सांस्कृतिक अध्ययन, चंद्रलोक प्रकाशन कानपुर - 21